विषय पाँच

यात्रियों के नज़रिए
समाज के बारे में उनकी समझ
(लगभग दसवीं से सत्रहवीं सदी तक)

12096CH05

महिलाओं और पुरुषों ने कार्य की तलाश में, प्राकृतिक आपदाओं से बचाव के लिए व्यापारियों, सैनिकों, पुरोहितों और तीर्थयात्रियों के रूप में या फिर साहस की भावना से प्रेरित होकर यात्राएँ की हैं। वे, जो किसी नए स्थान पर आते हैं अथवा बस जाते हैं, निश्चित रूप से एक ऐसी दुनिया को समक्ष पाते हैं जो भूदृश्य या भौतिक परिवेश के संदर्भ में और साथ ही लोगों की प्रथाओं, भाषाओं, आस्था तथा व्यवहार में भिन्न होती है। इनमें से कुछ इन भिन्नताओं के अनुरूप ढल जाते हैं और अन्य जो कुछ हद तक विशिष्ट होते हैं, इन्हें ध्यानपूर्वक अपने वृत्तांतों में लिख लेते हैं, जिनमें असामान्य तथा उल्लेखनीय बातों को अधिक महत्त्व दिया जाता है। दुर्भाग्य से हमारे पास महिलाओं द्वारा छोड़े गए वृत्तांत लगभग न के बराबर हैं, हालाँकि हम यह जानते हैं कि वे भी यात्राएँ करती थीं। सुरक्षित मिले वृत्तांत अपनी विषयवस्तु के संदर्भ में अलग-अलग प्रकार के होते हैं। कुछ दरबार की गतिविधियों से संबंधित होते हैं, जबकि अन्य धार्मिक विषयों, या स्थापत्य के तत्वों और स्मारकों पर केंद्रित होते हैं। उदाहरण के लिए, पंद्रहवीं शताब्दी में विजयनगर शहर (अध्याय 7) के सबसे महत्त्वपूर्ण विवरणों में से एक, हेरात से आए एक राजनयिक अब्दुर रज़्ज़ाक समरकंदी से प्राप्त होता है।

कई बार यात्री सुदूर क्षेत्रों में नहीं जाते हैं। उदाहरण के लिए, मुग़ल साम्राज्य (अध्याय 8 और 9) में प्रशासनिक अधिकारी कभी-कभी साम्राज्य के भीतर ही भ्रमण करते थे और अपनी टिप्पणियाँ दर्ज करते थे। इनमें से कुछ अपने ही देश की लोकप्रिय प्रथाओं तथा जन-वार्ताओं और परंपराओं को समझना चाहते थे।

इस अध्याय में हम यह देखेंगे कि उपमहाद्वीप में आए यात्रियों द्वारा दिए गए सामाजिक जीवन के विवरणों के अध्ययन से किस प्रकार हम अपने अतीत के विषय में ज्ञान बढ़ा सकते हैं। इसके लिए हम तीन व्यक्तियों के वृत्तांतों पर ध्यान देंगे: अल-बिरूनी, जो ग्यारहवीं शताब्दी में उज़्बेकिस्तान आया था, इब्न बतूता (चौदहवीं शताब्दी), मोरक्को से तथा फ्रांसीसी यात्री फ्रांस्वा बर्नियर (सत्रहवीं शताब्दी)।

चित्र 5.1 (क)
पान के पत्ते

चित्र 5.1 (ख)
नारियल
कई यात्रियों ने नारियल तथा पान जैसी चीज़ों को असामान्य माना।

पूरी तरह से भिन्न सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से आने के कारण ये लेखक दैनिक गतिविधियों तथा प्रथाओं के प्रति अधिक सावधान रहते थे। देशज लेखकों के लिए ये सभी विषय सामान्य थे जो वृत्तांतों में दर्ज करने योग्य नहीं थे। नज़रिये में यही भिन्नता ही यात्रा-वृत्तांतों को अधिक रोचक बनाती है। ये यात्री किसके लिए लिखते थे? जैसा कि हम देखेंगे, इस प्रश्न का उत्तर अलग-अलग दृष्टांतों में अलग था।

स्रोत 1

अल-बिरूनी के उद्देश्य

अल-बिरूनी ने अपने कार्य का वर्णन इस प्रकार किया:

> उन लोगों के लिए सहायक जो उनसे (हिंदुओं) धार्मिक विषयों पर चर्चा करना चाहते हैं और ऐसे लोगों के लिए एक सूचना का संग्रह जो उनके साथ संबद्ध होना चाहते हैं।

➲ अल-बिरूनी की कृति का अंश पढ़िए (स्रोत 5) तथा चर्चा कीजिए कि क्या यह कृति इन उद्देश्यों को पूरा करती है।

1. अल-बिरूनी तथा किताब-उल-हिन्द

1.1 *ख़्वारिज़्म से पंजाब तक*

अल-बिरूनी का जन्म आधुनिक उज़्बेकिस्तान में स्थित ख़्वारिज़्म में सन् 973 में हुआ था। ख़्वारिज़्म शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण केंद्र था और अल-बिरूनी ने उस समय उपलब्ध सबसे अच्छी शिक्षा प्राप्त की थी। वह कई भाषाओं का ज्ञाता था जिनमें सीरियाई, फ़ारसी, हिब्रू तथा संस्कृत शामिल हैं। हालाँकि वह यूनानी भाषा का जानकार नहीं था पर फिर भी वह प्लेटो तथा अन्य यूनानी दार्शनिकों के कार्यों से पूरी तरह परिचित था जिन्हें उसने अरबी अनुवादों के माध्यम से पढ़ा था। सन् 1017 ई. में ख़्वारिज़्म पर आक्रमण के पश्चात सुल्तान महमूद यहाँ के कई विद्वानों तथा कवियों को अपने साथ अपनी राजधानी ग़ज़नी ले गया। अल-बिरूनी भी उनमें से एक था। वह बंधक के रूप में ग़ज़नी आया था पर धीरे-धीरे उसे यह शहर पसंद आने लगा और सत्तर वर्ष की आयु में अपनी मृत्यु तक उसने अपना बाकी जीवन यहीं बिताया।

ग़ज़नी में ही अल-बिरूनी की भारत के प्रति रुचि विकसित हुई। यह कोई असामान्य बात नहीं थी। आठवीं शताब्दी से ही संस्कृत में रचित खगोल-विज्ञान, गणित और चिकित्सा संबंधी कार्यों का अरबी भाषा में अनुवाद होने लगा था। पंजाब के ग़ज़नवी साम्राज्य का हिस्सा बन जाने के बाद स्थानीय लोगों से हुए संपर्कों ने आपसी विश्वास और समझ का वातावरण बनाने में मदद की। अल-बिरूनी ने ब्राह्मण पुरोहितों तथा विद्वानों के साथ कई वर्ष बिताए और संस्कृत, धर्म तथा दर्शन का ज्ञान प्राप्त किया। हालाँकि उसका यात्रा-कार्यक्रम स्पष्ट नहीं है फिर भी प्रतीत होता है कि उसने पंजाब और उत्तर भारत के कई हिस्सों की यात्रा की थी।

ग्रंथों का अनुवाद, विचारों का आदान-प्रदान

कई भाषाओं में दक्षता हासिल करने के कारण अल-बिरूनी भाषाओं की तुलना तथा ग्रंथों का अनुवाद करने में सक्षम रहा। उसने कई संस्कृत कृतियों, जिनमें पतंजलि का व्याकरण पर ग्रंथ भी शामिल है, का अरबी में अनुवाद किया। अपने ब्राह्मण मित्रों के लिए उसने यूक्लिड (एक यूनानी गणितज्ञ) के कार्यों का संस्कृत में अनुवाद किया।

उसके लिखने के समय यात्रा वृत्तांत अरबी साहित्य का एक मान्य हिस्सा बन चुके थे। ये वृत्तांत पश्चिम में सहारा रेगिस्तान से लेकर उत्तर में वोल्गा नदी तक फैले क्षेत्रों से संबंधित थे। इसलिए, हालाँकि

1500 ई. से पहले भारत में अल-बिरूनी को कुछ ही लोगों ने पढ़ा होगा, भारत से बाहर कई अन्य लोग संभवतः ऐसा कर चुके हैं।

मापतंत्र विज्ञान मापने के विज्ञान से संबंध रखता है।

1.2 *किताब-उल-हिन्द*

अरबी में लिखी गई अल-बिरूनी की कृति *किताब-उल-हिन्द* की भाषा सरल और स्पष्ट है। यह एक विस्तृत ग्रंथ है जो धर्म और दर्शन, त्योहारों, खगोल-विज्ञान, कीमिया, रीति-रिवाजों तथा प्रथाओं, सामाजिक-जीवन, भार-तौल तथा मापन विधियों, मूर्तिकला, कानून, मापतंत्र विज्ञान आदि विषयों के आधार पर अस्सी अध्यायों में विभाजित है।

सामान्यतः (हालाँकि हमेशा नहीं) अल-बिरूनी ने प्रत्येक अध्याय में एक विशिष्ट शैली का प्रयोग किया जिसमें आरंभ में एक प्रश्न होता था, फिर संस्कृतवादी परंपराओं पर आधारित वर्णन और अंत में अन्य संस्कृतियों के साथ एक तुलना। आज के कुछ विद्वानों का तर्क है कि इस लगभग ज्यामितीय संरचना, जो अपनी स्पष्टता तथा पूर्वानुमेयता के लिए उल्लेखनीय है, का एक मुख्य कारण अल-बिरूनी का गणित की ओर झुकाव था।

अल-बिरूनी जिसने लेखन में भी अरबी भाषा का प्रयोग किया था, ने संभवतः अपनी कृतियाँ उपमहाद्वीप के सीमांत क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के लिए लिखी थीं। वह संस्कृत, पाली तथा प्राकृत ग्रंथों के अरबी भाषा में अनुवादों तथा रूपांतरणों से परिचित था-इनमें दंतकथाओं से लेकर खगोल-विज्ञान और चिकित्सा संबंधी कृतियाँ सभी शामिल थीं। पर साथ ही इन ग्रंथों की लेखन-सामग्री शैली के विषय में उसका दृष्टिकोण आलोचनात्मक था और निश्चित रूप से वह उनमें सुधार करना चाहता था।

हिंदू

"हिंदू" शब्द लगभग छठी-पाँचवीं शताब्दी ईसा पूर्व में प्रयुक्त होने वाले एक प्राचीन फ़ारसी शब्द, जिसका प्रयोग सिंधु नदी (Indus) के पूर्व के क्षेत्र के लिए होता था, से निकला था। अरबी लोगों ने इस फ़ारसी शब्द को जारी रखा और इस क्षेत्र को "अल-हिंद" तथा यहाँ के निवासियों को "हिंदी" कहा। कालांतर में तुर्कों ने सिंधु से पूर्व में रहने वाले लोगों को "हिंदू"; उनके निवास क्षेत्र को "हिंदुस्तान" तथा उनकी भाषा को "हिंदवी" का नाम दिया। इनमें से कोई भी शब्द लोगों की धार्मिक पहचान का द्योतक नहीं था। इस शब्द का धार्मिक संदर्भ में प्रयोग बहुत बाद की बात है।

➲ चर्चा कीजिए...

यदि अल-बिरूनी इक्कीसवीं शताब्दी में रहता, तो वही भाषाएँ जानने पर भी उसे विश्व के किन क्षेत्रों में आसानी से समझा जा सकता था?

चित्र 5.2
तेरहवीं शताब्दी की अरबी पांडुलिपि का एक चित्र जिसमें छठी शताब्दी ईसा पूर्व एथेंस के राजनेता एवं कवि सोलोन को विद्यार्थियों को संबोधित करते हुए दिखाया गया है।

सोलोन एवं उनके विद्यार्थियों के कपड़ों को ध्यान से देखिए।

➲ क्या ये कपड़े यूनानी हैं अथवा अरबी?

स्रोत 2

घोंसले से निकलता पक्षी

यह रिह्ला से लिया गया एक उद्धरण है:

अपने जन्म स्थान तैंजियर से मेरा प्रस्थान गुरुवार को हुआ... मैं अकेला ही निकल पड़ा, बिना किसी साथी यात्री... या कारवाँ के जिसकी टोली में मैं शामिल हो सकूँ, लेकिन अपने अंदर एक अधिप्रभावी आवेग और इन प्रसिद्ध पुण्यस्थानों को देखने की इच्छा जो लंबे समय से मेरे अंत:करण में थी, से प्रभावित होकर। इसलिए मैंने अपने प्रियजनों को छोड़ जाने के निश्चय को दृढ़ किया और अपने घर को ऐसे ही छोड़ दिया जैसे पक्षी अपने घोंसलों को छोड़ देते हैं... उस समय मेरी उम्र बाईस वर्ष थी।

इब्न बतूता 1354 में घर वापस पहुँचा, अपनी यात्रा आरंभ करने के लगभग तीस वर्ष बाद।

चित्र 5.3
डाकू यात्रियों पर हमला कर रहे हैं, सोलहवीं शताब्दी का मुग़ल चित्र

➲ आप डाकुओं को यात्रियों से कैसे अलग करेंगे?
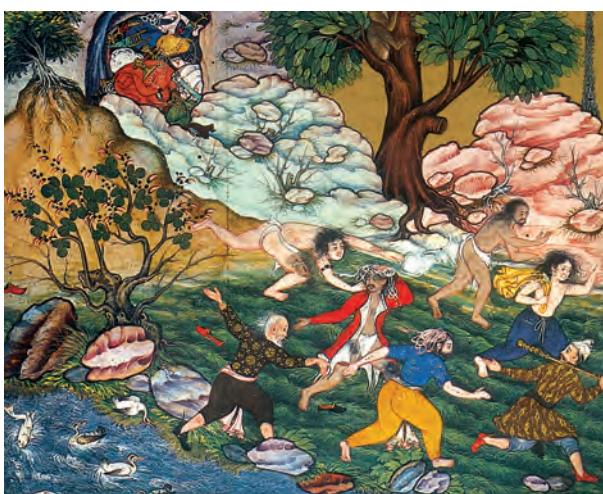
2. इब्न बतूता का *रिह्ला*

2.1 *एक आरंभिक विश्व-यात्री*

इब्न बतूता द्वारा अरबी भाषा में लिखा गया उसका यात्रा वृत्तांत जिसे *रिह्ला* कहा जाता है, चौदहवीं शताब्दी में भारतीय उपमहाद्वीप के सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन के विषय में बहुत ही प्रचुर तथा रोचक जानकारियाँ देता है। मोरक्को के इस यात्री का जन्म तैंजियर के सबसे सम्मानित तथा शिक्षित परिवारों में से एक, जो इस्लामी कानून अथवा *शरिया* पर अपनी विशेषज्ञता के लिए प्रसिद्ध था, में हुआ था। अपने परिवार की परंपरा के अनुसार इब्न बतूता ने कम उम्र में ही साहित्यिक तथा शास्त्ररूढ़ शिक्षा हासिल की।

अपनी श्रेणी के अन्य सदस्यों के विपरीत, इब्न बतूता पुस्तकों के स्थान पर यात्राओं से अर्जित अनुभव को ज्ञान का अधिक महत्त्वपूर्ण स्रोत मानता था। उसे यात्राएँ करने का बहुत शौक था और वह नए-नए देशों और लोगों के विषय में जानने के लिए दूर-दूर के क्षेत्रों तक गया। 1332-33 में भारत के लिए प्रस्थान करने से पहले वह मक्का की तीर्थ यात्राएँ और सीरिया, इराक, फारस, यमन, ओमान तथा पूर्वी अफ्रीका के कई तटीय व्यापारिक बंदरगाहों की यात्राएँ कर चुका था।

मध्य एशिया के रास्ते होकर इब्न बतूता सन् 1333 में स्थलमार्ग से सिंध पहुँचा। उसने दिल्ली के सुल्तान मुहम्मद बिन तुग़लक के बारे में सुना था और कला और साहित्य के एक दयाशील संरक्षक के रूप में उसकी ख्याति से आकर्षित हो बतूता ने मुल्तान और उच्छ के रास्ते होकर दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। सुल्तान उसकी विद्वता से प्रभावित हुआ और उसे दिल्ली का क़ाज़ी या न्यायाधीश नियुक्त किया। वह इस पद पर कई वर्षों तक रहा, पर फिर उसने विश्वास खो दिया और उसे कारागार में कैद कर दिया गया। बाद में सुल्तान और उसके बीच की गलतफहमी दूर होने के बाद उसे राजकीय सेवा में पुनर्स्थापित किया गया और 1342 ई. में मंगोल शासक के पास सुल्तान के दूत के रूप में चीन जाने का आदेश दिया गया।

अपनी नयी नियुक्ति के साथ इब्न बतूता मध्य भारत के रास्ते मालाबार तट की ओर बढ़ा। मालाबार से वह मालद्वीप गया जहाँ वह अठारह महीनों तक क़ाज़ी के पद पर रहा पर अंतत: उसने श्रीलंका जाने का निश्चय किया। बाद में एक बार फिर वह मालाबार तट तथा मालद्वीप गया और चीन जाने के अपने कार्य को दोबारा शुरू करने से पहले वह बंगाल तथा असम भी गया। वह जहाज से सुमात्रा गया और सुमात्रा से एक अन्य जहाज से चीनी बंदरगाह नगर

जायतुन (जो आज क्वानझू के नाम से जाना जाता है) गया। उसने व्यापक रूप से चीन में यात्रा की और वह बीजिंग तक गया, लेकिन वहाँ लंबे समय तक नहीं ठहरा। 1347 में उसने वापस अपने घर जाने का निश्चय किया। चीन के विषय में उसके वृत्तांत की तुलना मार्को पोलो, जिसने तेरहवीं शताब्दी के अंत में वेनिस से चलकर चीन (और भारत की भी) की यात्रा की थी, के वृत्तांत से की जाती है।

चित्र 5.4
नाव में यात्री, बंगाल के एक मंदिर की मृण मूर्तिकला।
(लगभग सत्रहवीं अठारहवीं शताब्दियाँ)

➲ आपके मत में कुछ यात्रियों के हाथों में हथियार क्यों हैं?

इब्न बतूता ने नवीन संस्कृतियों, लोगों, आस्थाओं, मान्यताओं आदि के विषय में अपने अभिमत को सावधानी तथा कुशलतापूर्वक दर्ज किया। हमें यह ध्यान में रखना होगा कि यह विश्व-यात्री चौदहवीं शताब्दी में यात्राएँ कर रहा था, जब आज की तुलना में यात्रा करना अधिक कठिन तथा जोखिम भरा कार्य था। इब्न बतूता के अनुसार उसे मुल्तान से दिल्ली की यात्रा में चालीस और सिंध से दिल्ली की यात्रा में लगभग पचास दिन का समय लगा था। दौलताबाद से दिल्ली की दूरी चालीस, जबकि ग्वालियर से दिल्ली की दूरी दस दिन में तय की जा सकती थी।

एकाकी यात्री

लंबी यात्राओं में लुटेरे ही एकमात्र खतरा नहीं थे: यात्री गृहातुर हो सकता था और बीमार हो सकता था। यह *रिह्ला* से लिया गया एक उद्धरण है:

मुझे ज्वर ने जकड़ लिया था, और मैंने अपने आप को कमज़ोरी के कारण गिरने से बचाने के लिए पगड़ी के कपड़े को जीन से बाँध लिया... अंतत: हम ट्यूनिस शहर पहुँचे और वहाँ के निवासी शेख... और... क़ाज़ी के पुत्र का स्वागत करने के लिए बाहर आए। वे हर ओर एक दूसरे के लिए अभिवादन और प्रश्नों के साथ आगे आए, लेकिन उनमें से किसी ने भी मेरा अभिवादन नहीं किया क्योंकि वहाँ कोई भी ऐसा नहीं था जिससे मेरा परिचय हो। अपने एकाकीपन से मैं इतना उदास हुआ कि अपनी आँखों में आए आँसुओं को रोक नहीं सका, और बहुत रोया। पर एक तीर्थयात्री मेरी कुंठा का कारण जानकर मेरे पास आया और अभिवादन किया...।

मानचित्र 1
अफ़गानिस्तान, सिंध और पंजाब में इब्न बतूता द्वारा भ्रमण किए गए स्थान। कई जगहों के नाम उस तरह से लिखे गए हैं जिस तरह से इब्न बतूता उन्हें जानता होगा।

यात्रा करना अधिक असुरक्षित भी था; इब्न बतूता ने कई बार डाकुओं के समूहों द्वारा किए गए आक्रमण झेले थे। यहाँ तक कि वह अपने साथियों के साथ कारवाँ में चलना पसंद करता था, पर इससे भी राजमार्गों के लुटेरों को रोका नहीं जा सका। मुल्तान से दिल्ली की यात्रा के दौरान उसके कारवाँ पर आक्रमण हुआ, और उसके कई साथी यात्रियों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा: जो जीवित बचे, जिनमें इब्न बतूता भी शामिल था, बुरी तरह से घायल हो गए थे।

2.2 जिज्ञासाओं का उपभोग

जैसाकि हमने देखा है कि इब्न बतूता एक हठीला यात्री था जिसने उत्तर पश्चिमी अफ़्रीका में अपने निवास स्थान मोरक्को वापस जाने से पूर्व कई वर्ष उत्तरी अफ़्रीका, पश्चिम एशिया, मध्य एशिया के कुछ भाग (हो सकता है वह रूस भी गया हो), भारतीय उपमहाद्वीप तथा चीन की यात्रा की थी। जब वह वापस आया तो स्थानीय शासक ने निर्देश दिए कि उसकी कहानियों को दर्ज किया जाए।

स्रोत 3

शिक्षा तथा मनोरंजन

इब्न जुज़ाई जिसे इब्न बतूता के श्रुतलेखों को लिखने के लिए नियुक्त किया गया था, अपनी प्रस्तावना में लिखता है:

(राजा के द्वारा) एक शालीन निर्देश दिया गया कि वे (इब्न बतूता) अपनी यात्रा में देखे गए शहरों का, तथा अपनी स्मृति में बैठ गई रोचक घटनाओं का एक वृत्तांत लिखवाएँ, और साथ ही विभिन्न देशों के शासकों में से जिनसे वे मिले, उनके महान साहित्यकारों के तथा उनके धर्मनिष्ठ संतों के विषय में बताएँ। तदनुसार उन्होंने इन सभी विषयों पर एक कथानक लिखवाया जिसने मस्तिष्क को मनोरंजन तथा कान और आँख को प्रसन्नता दी। साथ ही उन्होंने कई प्रकार के असाधारण विवरण जिनके प्रतिपादन से लाभप्रद उपदेश मिलते हैं, दिए तथा असाधारण चीज़ों के बारे में बताया जिनके संदर्भ से अभिरुचि जगी।

इब्न बतूता के पदचिह्नों पर

1400 से 1800 के बीच भारत आए यात्रियों ने फ़ारसी में कई यात्रा वृत्तांत लिखे। उसी समय भारत से मध्य एशिया, ईरान तथा ऑटोमन साम्राज्य की यात्रा करने वालों ने भी कभी-कभी अपने अनुभव लिखे। इन लेखकों ने अल-बिरूनी और इब्न बतूता के पदचिह्नों का अनुसरण किया। इनमें से कुछ ने इन पूर्ववर्ती लेखकों को पढ़ा भी था।

इनमें से सबसे प्रसिद्ध लेखकों में अब्दुर रज़्ज़ाक समरकंदी जिसने 1440 के दशक में दक्षिण भारत की यात्रा की थी, महमूद वली बल्खी, जिसने 1620 के दशक में व्यापक रूप से यात्राएँ की थीं तथा शेख़ अली हाज़िन जो 1740 के दशक में उत्तर भारत आया था, शामिल हैं। इनमें से कुछ लेखक भारत से सम्मोहित थे, और यहाँ तक कि उनमें से एक महमूद बल्ख़ी तो कुछ समय के लिए सन्यासी भी बन गया था। कुछ अन्य जैसे कि हाज़िन भारत से निराश हुए और यहाँ तक कि घृणा भी करने लगे। वे भारत में अपने लिए एक उत्सवीय स्वागत की आशा कर रहे थे। उनमें से अधिकांश ने भारत को अचंभों के देश के रूप में देखा।

चित्र 5.5
अठारहवीं शताब्दी का एक चित्र जिसमें यात्रियों को आग के आस-पास इकट्ठा हुआ दिखाया गया है।

➲ चर्चा कीजिए...

आपके विचार में अल-बिरूनी और इब्न बतूता के उद्देश्य किन मायनों में समान/भिन्न थे?

चित्र 5.6
सत्रहवीं शताब्दी के एक चित्र में बर्नियर को यूरोपीय पोशाक में दर्शाया गया है।

3. फ्रांस्वा बर्नियर : एक विशिष्ट चिकित्सक

लगभग 1500 ई. में भारत में पुर्तगालियों के आगमन के पश्चात उनमें से कई लोगों ने भारतीय सामाजिक रीति-रिवाजों तथा धार्मिक प्रथाओं के विषय में विस्तृत वृत्तांत लिखे। उनमें से कुछ चुनिंदा लोगों, जैसे जेसुइट रॉबर्टो नोबिली, ने तो भारतीय ग्रंथों को यूरोपीय भाषाओं में अनुवादित भी किया।

सबसे प्रसिद्ध यूरोपीय लेखकों में एक नाम दुआर्ते बरबोसा का है जिसने दक्षिण भारत में व्यापार और समाज का एक विस्तृत विवरण लिखा। कालान्तर में 1600 ई. के बाद भारत में आने वाले डच, अंग्रेज़ तथा फ्रांसीसी यात्रियों की संख्या बढ़ने लगी थी। इनमें एक प्रसिद्ध नाम फ्रांसीसी जौहरी ज्यौं-बैप्टिस्ट तैवर्नियर का था जिसने कम से कम छह बार भारत की यात्रा की। वह विशेष रूप से भारत की व्यापारिक स्थितियों से बहुत प्रभावित था और उसने भारत की तुलना ईरान और ऑटोमन साम्राज्य से की। इनमें से कई यात्री जैसे इतालवी चिकित्सक मनूकी, कभी भी यूरोप वापस नहीं गए और भारत में ही बस गए।

फ्रांस का रहने वाला फ्रांस्वा बर्नियर एक चिकित्सक, राजनीतिक दार्शनिक तथा एक इतिहासकार था। कई और लोगों की तरह ही वह मुग़ल साम्राज्य में अवसरों की तलाश में आया था। वह 1656 से 1668 तक भारत में बारह वर्ष तक रहा और मुग़ल दरबार से नज़दीकी रूप से जुड़ा रहा-पहले सम्राट शाहजहाँ के ज्येष्ठ पुत्र दारा शिकोह के चिकित्सक के रूप में, और बाद में मुग़ल दरबार के एक आर्मीनियाई अमीर दानिशमंद ख़ान के साथ एक बुद्धिजीवी तथा वैज्ञानिक के रूप में।

3.1 "पूर्व" और "पश्चिम" की तुलना

बर्नियर ने देश के कई भागों की यात्रा की और जो देखा उसके विषय में विवरण लिखे। वह सामान्यतः भारत में जो देखता था उसकी तुलना यूरोपीय स्थिति से करता था। उसने अपनी प्रमुख कृति को फ्रांस के शासक लुई XIV को समर्पित किया था और उसके कई अन्य कार्य प्रभावशाली आधिकारियों और मंत्रियों को पत्रों के रूप में लिखे गए थे। लगभग प्रत्येक दृष्टांत में बर्नियर ने भारत की स्थिति को यूरोप में हुए विकास की तुलना में दयनीय बताया। जैसाकि हम देखेंगे उसका आकलन हमेशा सटीक नहीं था फिर भी जब उसके कार्य प्रकाशित हुए तो बर्नियर के वृत्तांत अत्यधिक प्रसिद्ध हुए।

चित्र 5.7
भारतीय पोशाक में तैवर्नियर का चित्र

स्रोत 4

मुग़ल सेना के साथ यात्रा

बर्नियर ने कई बार मुग़ल सेना के साथ यात्राएँ की। यहाँ सेना के कश्मीर कूच के संबंध में दिए गए विवरण से एक अंश दिया जा रहा है:

इस देश की प्रथा के अनुसार मुझसे दो अच्छे तुर्कमान घोड़े देखने की अपेक्षा की जाती है और मैं अपने साथ एक शक्तिशाली फ़ारसी ऊँट तथा चालक, अपने घोड़ों के लिए एक साईस, एक खानसामा तथा एक सेवक जो हाथ में पानी का पात्र लेकर मेरे घोड़े के आगे चलता है, भी रखता हूँ। मुझे हर उपयोगी वस्तु दी गई है जैसे औसत आकार का एक तंबू, एक दरी, चार बहुत कठोर पर हलके बेतों से बना एक छोटा बिस्तर, एक तकिया, एक बिछौना, भोजन के समय प्रयुक्त गोलाकार चमड़े के मेज़पोश, रँगे हुए कपड़ों के कुछ अंगोछे/नैपकिन, खाना बनाने के सामान से भरे तीन छोटे झोले जो सभी एक बड़े झोले में रखे हुए थे, और यह झोला भी एक लंबे-चौड़े तथा सुदृढ़ दुहरे बोरे अथवा चमड़े के पट्टों से बने जाल में रखा है। इसी तरह इस दुहरे बोरे में स्वामी और सेवकों की खाद्य सामग्री, साम्राज्य कपड़े तथा वस्त्र रखे गए हैं। मैंने ध्यानपूर्वक पाँच या छह दिनों के उपभोग के लिए बढ़िया चावल; सौंफ (एक प्रकार का शाक/पौधा) की सुगंध वाली मीठी रोटी, नींबू तथा चीनी का भंडार साथ रखा है। साथ ही मैं दही को टाँगने और पानी निकालने के लिए प्रयुक्त छोटे, लोहे के अंकुश वाला झोला लेना भी नहीं भूला हूँ। इस देश में नींबू के शरबत और दही से अधिक ताज़गी भरी वस्तु कोई नहीं मानी जाती।

➲ बर्नियर द्वारा दी गई सूची में कौन सी वस्तुएँ हैं जो आज आप यात्रा में साथ ले जाएँगे?

बर्नियर के कार्य फ्रांस में 1670-71 में प्रकाशित हुए थे, और अगले पाँच वर्षों के भीतर ही अंग्रेज़ी, डच, जर्मन तथा इतालवी भाषाओं में इनका अनुवाद हो गया। 1670 और 1725 के बीच उसका वृत्तांत फ्रांसीसी में आठ बार पुनर्मुद्रित हो चुका था और 1684 तक यह तीन बार अंग्रेज़ी में पुनर्मुद्रित हुआ था। यह अरबी और फ़ारसी वृत्तांतों जिनका प्रसार हस्तलिपियों के रूप में होता था और जो 1800 से पहले सामान्यतः प्रकाशित नहीं होते थे, के पूरी तरह विपरीत था।

भारत के विषय में विचारों का निर्माण व प्रसार

भारत के विषय में विचारों का सृजन और प्रसार कर यूरोपीय यात्रियों के वृत्तांतों ने उनकी पुस्तकों के प्रकाशन और प्रसार के माध्यम से यूरोपीय लोगों के लिए भारत की एक छवि के सृजन में सहायता की। बाद में, 1750 के बाद, जब शेख इतिसमुद्दीन तथा मिर्ज़ा अबु तालिब जैसे भारतीयों ने यूरोप की यात्रा की तो उन्हें यूरोपीय लोगों की भारतीय समाज की छवि का सामना करना पड़ा और उन्होंने तथ्यों की अपनी अलग व्याख्या के माध्यम से इसे प्रभावित करने का प्रयास किया।

➲ चर्चा कीजिए...

भारतीय भाषाओं में बहुत प्रचुर यात्रा वृत्तांत साहित्य उपलब्ध है। आप अपने घर में बोली जाने वाली भाषा के यात्री-लेखकों के विषय में पता कीजिए। किसी एक ऐसे वृत्तांत को पढ़िए और यात्री द्वारा देखे गए क्षेत्रों, उसने जो देखा और उसके द्वारा वृत्तांत लिखे जाने के कारणों पर टिप्पणी लिखिए।

4. एक अपरिचित संसार की समझ अल-बिरूनी तथा संस्कृतवादी परंपरा

4.1 समझने में बाधाएँ और उन पर विजय

जैसा कि हमने देखा है, यात्रियों ने उपमहाद्वीप में जो भी देखा, सामान्यत: उसकी तुलना उन्होंने उन प्रथाओं से की जिनसे वे परिचित थे। प्रत्येक यात्री ने जो देखा उसे समझने के लिए एक अलग विधि अपनाई। उदाहरण के लिए, अल-बिरूनी अपने लिए निर्धारित उद्देश्य में निहित समस्याओं से परिचित था। उसने कई "अवरोधों" की चर्चा की है जो उसके अनुसार समझ में बाधक थे। इनमें से पहला अवरोध भाषा थी। उसके अनुसार संस्कृत, अरबी और फ़ारसी से इतनी भिन्न थी कि विचारों और सिद्धांतों को एक भाषा से दूसरी में अनुवादित करना आसान नहीं था।

उसके द्वारा चिह्नित दूसरा अवरोध धार्मिक अवस्था और प्रथा में भिन्नता थी। उसके अनुसार तीसरा अवरोध अभिमान था। यहाँ रोचक बात यह है कि इन समस्याओं की जानकारी होने पर भी, अल-बिरूनी लगभग पूरी तरह से ब्राह्मणों द्वारा रचित कृतियों पर आश्रित रहा। उसने भारतीय समाज को समझने के लिए अकसर वेदों, पुराणों, भगवद्गीता, पतंजलि की कृतियों तथा मनुस्मृति आदि से अंश उद्धृत किए।

विशाल पहुँच वाली एक भाषा

संस्कृत के विषय में अल-बिरूनी यह लिखता है:

> यदि आप इस कठिनाई (संस्कृत भाषा सीखने की) से पार पाना चाहते हैं तो यह आसान नहीं होगा क्योंकि अरबी भाषा की तरह ही, शब्दों तथा विभक्तियों, दोनों में ही इस भाषा की पहुँच बहुत विस्तृत है। इसमें एक ही वस्तु के लिए कई शब्द, मूल तथा व्युत्पन्न दोनों, प्रयुक्त होते हैं और एक ही शब्द का प्रयोग कई वस्तुओं के लिए होता है, जिन्हें भली प्रकार समझने के लिए विभिन्न विशेषक संकेतपदों के माध्यम से एक दूसरे से अलग किया जाना आवश्यक है।

4.2 अल-बिरूनी का जाति व्यवस्था का विवरण

अल-बिरूनी ने अन्य समुदायों में प्रतिरूपों की खोज के माध्यम से जाति व्यवस्था को समझने और व्याख्या करने का प्रयास किया। उसने लिखा कि प्राचीन फ़ारस में चार सामाजिक वर्गों को मान्यता थी: घुड़सवार और शासक वर्ग, भिक्षु, आनुष्ठानिक पुरोहित तथा चिकित्सक, खगोल शास्त्री तथा अन्य वैज्ञानिक और अंत में कृषक तथा शिल्पकार। दूसरे शब्दों में, वह यह दिखाना चाहता था कि ये सामाजिक वर्ग केवल भारत तक ही सीमित नहीं थे। इसके साथ ही, उसने यह दर्शाया कि इस्लाम में सभी लोगों को समान माना जाता था और उनमें भिन्नताएँ केवल धार्मिकता के पालन में थीं।

जाति व्यवस्था के संबंध में ब्राह्मणवादी व्याख्या को मानने के बावजूद, अल-बिरूनी ने अपवित्रता की मान्यता को अस्वीकार किया। उसने लिखा कि हर वह वस्तु जो अपवित्र हो जाती है, अपनी पवित्रता की मूल स्थिति को पुन: प्राप्त करने का प्रयास करती है और सफल होती है। सूर्य हवा को स्वच्छ करता है और समुद्र में नमक पानी को गंदा होने से बचाता है। अल-बिरूनी ज़ोर देकर कहता है कि यदि ऐसा

ईश्वर ही जानता है!

यात्री हमेशा उन्हें बताई गई बातों पर विश्वास नहीं करते थे। अल-बिरूनी को जब ऐसी लकड़ी की मूर्ति की कहानी के बारे में पता चला जो तथाकथित रूप से 216,432 वर्षों तक अस्तित्व में रही, तो वह पूछता है:

> फिर लकड़ी इतने लंबे समय तक अस्तित्व में कैसे रही होगी, विशेष रूप से ऐसे स्थान पर जहाँ हवा और मिट्टी काफ़ी आर्द्र होती है? ईश्वर ही जानता है!

नहीं होता तो पृथ्वी पर जीवन असंभव होता। उसके अनुसार जाति व्यवस्था में सन्निहित अपवित्रता की अवधारणा प्रकृति के नियमों के विरुद्ध थी।

स्रोत 5

वर्ण व्यवस्था

अल-बिरूनी वर्ण व्यवस्था का इस प्रकार उल्लेख करता है:

सबसे ऊँची जाति ब्राह्मणों की है जिनके विषय में हिंदुओं के ग्रंथ हमें बताते हैं कि वे ब्रह्मन् के सिर से उत्पन्न हुए थे और क्योंकि ब्रह्म, प्रकृति नामक शक्ति का ही दूसरा नाम है, और सिर.... शरीर का सबसे ऊपरी भाग है, इसलिए ब्राह्मण पूरी प्रजाति के सबसे चुनिंदा भाग हैं। इसी कारण से हिंदू उन्हें मानव जाति में सबसे उत्तम मानते हैं।

अगली जाति क्षत्रियों की है जिनका सृजन, ऐसा कहा जाता है, ब्रह्मन् के कंधों और हाथों से हुआ था। उनका दर्जा ब्राह्मणों से अधिक नीचे नहीं है।

उनके पश्चात वैश्य आते हैं जिनका उद्‌भव ब्रह्मन् की जंघाओं से हुआ था।

शूद्र, जिनका सृजन उनके चरणों से हुआ था।

अंतिम दो वर्गों के बीच अधिक अंतर नहीं है। लेकिन इन वर्गों के बीच भिन्नता होने पर भी ये एक साथ एक ही शहरों और गाँवों में रहते हैं, समान घरों और आवासों में मिल-जुल कर।

➲ अल-बिरूनी ने जो लिखा उसकी तुलना अध्याय 3 स्रोत 6 से कीजिए। क्या आप कुछ समानताएँ और भिन्नताएँ देखते हैं? क्या आप को लगता है कि अल-बिरूनी भारतीय समाज के विषय में अपनी जानकारी और समझ के लिए केवल संस्कृत के ग्रंथों पर आश्रित रहा?

जैसाकि हमने देखा है, जाति व्यवस्था के विषय में अल-बिरूनी का विवरण उसके नियामक संस्कृत ग्रंथों के अध्ययन से पूरी तरह से गहनता से प्रभावित था। इन ग्रंथों में ब्राह्मणों के दृष्टिकोण से जाति व्यवस्था को संचालित करने वाले नियमों का प्रतिपादन किया गया था। लेकिन वास्तविक जीवन में यह व्यवस्था इतनी भी कड़ी नहीं थी। उदाहरण के लिए, अंत्यज (शाब्दिक रूप में व्यवस्था से परे) नामक श्रेणियों से सामान्यतया यह अपेक्षा की जाती थी कि वे किसानों और ज़मींदारों के लिए सस्ता श्रम उपलब्ध करें (अध्याय 8 भी देखिए)। दूसरे शब्दों में, हालाँकि ये अक्सर सामाजिक प्रताड़ना का शिकार होते थे, फिर भी इन्हें आर्थिक तंत्र में शामिल किया जाता था।

➲ चर्चा कीजिए...

एक अन्य क्षेत्र से आए यात्री के लिए स्थानीय क्षेत्र की भाषा का ज्ञान कितना आवश्यक है?

5. इब्न बतूता तथा अनजाने को जानने की उत्कंठा

जब चौदहवीं शताब्दी में इब्न बतूता दिल्ली आया था उस समय तक पूरा उपमहाद्वीप एक ऐसे वैश्विक संचार तंत्र का हिस्सा बन चुका था जो पूर्व में चीन से लेकर पश्चिम में उत्तर-पश्चिमी अफ़्रीका तथा यूरोप तक फैला हुआ था। जैसाकि हमने देखा है, इब्न बतूता ने स्वयं इन क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर यात्राएँ की, पवित्र पूजास्थलों को देखा, विद्वान लोगों तथा शासकों के साथ समय बिताया, कई बार क़ाज़ी के पद पर रहा, तथा शहरी केन्द्रों की विश्ववादी संस्कृति का उपभोग किया जहाँ अरबी, फ़ारसी, तुर्की तथा अन्य भाषाएँ बोलने वाले लोग विचारों, सूचनाओं तथा उपाख्यानों का आदान-प्रदान करते थे। इनमें अपनी धर्मनिष्ठता के लिए प्रसिद्ध लोगों की, ऐसे राजाओं जो निर्दयी तथा दयावान दोनों हो सकते थे की, तथा समान्य पुरुषों और महिलाओं तथा उनके जीवन की कहानियाँ सम्मिलित थीं; जो भी कुछ अपरिचित था उसे विशेष रूप से रेखांकित किया जाता था। ऐसा यह सुनिश्चित करने के लिए किया जाता था कि श्रोता अथवा पाठक सुदूर पर सुगम्य देशों के वृत्तांतों से पूरी तरह प्रभावित हो सकें।

स्रोत 6

मानव सिर जैसे गिरिदार फल

नारियल का वर्णन इब्न बतूता इस प्रकार करता है:

> ये वृक्ष स्वरूप से सबसे अनोखे तथा प्रकृति में सबसे विस्मयकारी वृक्षों में से एक हैं। ये हू-बहू खजूर के वृक्ष जैसे दिखते हैं। इनमें कोई अंतर नहीं है सिवाय एक अपवाद के – एक से काष्ठफल प्राप्त होता है और दूसरे से खजूर। नारियल के वृक्ष का फल मानव सिर से मेल खाता है क्योंकि इसमें भी मानो दो आँखें तथा एक मुख है और अंदर का भाग हरा होने पर मस्तिष्क जैसा दिखता है और इससे जुड़ा रेशा बालों जैसा दिखाई देता है। वे इससे रस्सी बनाते हैं। लोहे की कीलों के प्रयोग के बजाय इनसे जहाज़ को सिलते हैं। वे इससे बर्तनों के लिए रस्सी भी बनाते हैं।

➲ किस तरह की तुलनाओं से इब्न बतूता अपने पाठकों को ये बताने की कोशिश कर रहे हैं कि नारियल देखने में कैसे होते हैं?

नारियल कैसे होते हैं – अपने पाठकों को यह समझाने के लिए इब्न बतूता किस तरह की तुलनाएँ प्रस्तुत करता है? क्या ये तुलनाएँ वाजिब हैं? वो किस तरह से ये दिखाता है कि नारियल असाधारण फल है? बतूता का वर्णन कितना सटीक है?

5.1 नारियल तथा पान

इब्न बतूता की चित्रण की विधियों के कुछ बेहतरीन उदाहरण उन तरीकों में मिलते हैं जिनसे वह नारियल और पान, दो ऐसी वानस्पतिक उपज जिनसे उसके पाठक पूरी तरह से अपरिचित थे, का वर्णन करता है।

स्रोत 7

पान

इब्न बतूता द्वारा दिया गया पान का वर्णन पढ़िए:

> पान एक ऐसा वृक्ष है जिसे अंगूर-लता की तरह ही उगाया जाता है;... पान का कोई फल नहीं होता और इसे केवल इसकी पत्तियों के लिए ही उगाया जाता है... इसे प्रयोग करने की विधि यह है कि इसे खाने से पहले सुपारी ली जाती है; यह जायफल जैसी ही होती है पर इसे तब तक तोड़ा जाता है जब तक इसके छोटे-छोटे टुकड़े नहीं हो जाते; और इन्हें मुँह में रख कर चबाया जाता है। इसके बाद पान की पत्तियों के साथ इन्हें चबाया जाता है।

➲ आपके विचार में इसने इब्न बतूता का ध्यान क्यों खींचा? क्या आप इस विवरण में कुछ और जोड़ना चाहेंगे?

5.2 इब्न बतूता और भारतीय शहर

इब्न बतूता ने उपमहाद्वीप के शहरों को उन लोगों के लिए व्यापक अवसरों से भरपूर पाया जिनके पास आवश्यक इच्छा, साधन तथा कौशल था। ये शहर घनी आबादी वाले तथा समृद्ध थे सिवाय कभी-कभी युद्धों तथा अभियानों से होने वाले विध्वंस के। इब्न बतूता के वृत्तांत से ऐसा प्रतीत होता है कि अधिकांश शहरों में भीड़-भाड़ वाली सड़कें तथा चमक-दमक वाले और रंगीन बाज़ार थे जो विविध प्रकार की वस्तुओं से भरे रहते थे। इब्न बतूता दिल्ली को एक बड़ा शहर, विशाल आबादी वाला तथा भारत में सबसे बड़ा बताता है। दौलताबाद (महाराष्ट्र में) भी कम नहीं था और आकार में दिल्ली को चुनौती देता था।

➲ स्थापत्य के कौन से अभिलक्षणों पर इब्न बतूता ने ध्यान दिया?

चित्र 5.8 तथा 5.9 से इस वर्णन की तुलना कीजिए।

स्रोत 8

देहली

दिल्ली, जिसे तत्कालीन ग्रंथों में अक्सर देहली नाम से उद्धृत किया गया था, का वर्णन इब्न बतूता इस प्रकार करता है:

दिल्ली बड़े क्षेत्र में फैला घनी जनसंख्या वाला शहर है... शहर के चारों ओर बनी प्राचीर अतुलनीय है, दीवार की चौड़ाई ग्यारह हाथ (एक हाथ लगभग 20 इंच के बराबर) है; और इसके भीतर रात्रि के पहरेदार तथा द्वारपालों के कक्ष हैं। प्राचीरों के अंदर खाद्यसामग्री, हथियार, बारूद, प्रक्षेपास्त्र तथा घेरेबंदी में काम आने वाली मशीनों के संग्रह के लिए भंडारगृह बने हुए थे... प्राचीर के भीतरी भाग में घुड़सवार तथा पैदल सैनिक शहर के एक से दूसरे छोर तक आते-जाते हैं। प्राचीर में खिड़कियाँ बनी हैं जो शहर की ओर खुलती हैं और इन्हीं खिड़कियों के माध्यम से प्रकाश अंदर आता है। प्राचीर का निचला भाग पत्थर से बना है जबकि ऊपरी भाग ईंटों से। इसमें एक दूसरे के पास-पास बनी कई मीनारें हैं। इस शहर के अट्ठाईस द्वार हैं जिन्हें दरवाज़ा कहा जाता है, और इनमें से बदायूँ दरवाज़ा सबसे विशाल है; मांडवी दरवाज़े के भीतर एक अनाज मंडी है; गुल दरवाज़े की बगल में एक फलों का बगीचा है... इस (देहली शहर) में एक बेहतरीन क़ब्रगाह है जिसमें बनी क़ब्रों के ऊपर गुंबद बनाई गई है और जिन क़ब्रों पर गुंबद नहीं है उनमें निश्चित रूप से मेहराब है। क़ब्रगाह में कंदाकार चमेली तथा जंगली गुलाब जैसे फूल उगाए जाते हैं; और फूल सभी मौसमों में खिले रहते हैं।

चित्र 5.8 (ऊपर)
तुग़लक़ाबाद, दिल्ली का एक मेहराब।

चित्र 5.9 (बाएँ)
बस्ती की किलेबंदी की दीवार का एक हिस्सा।
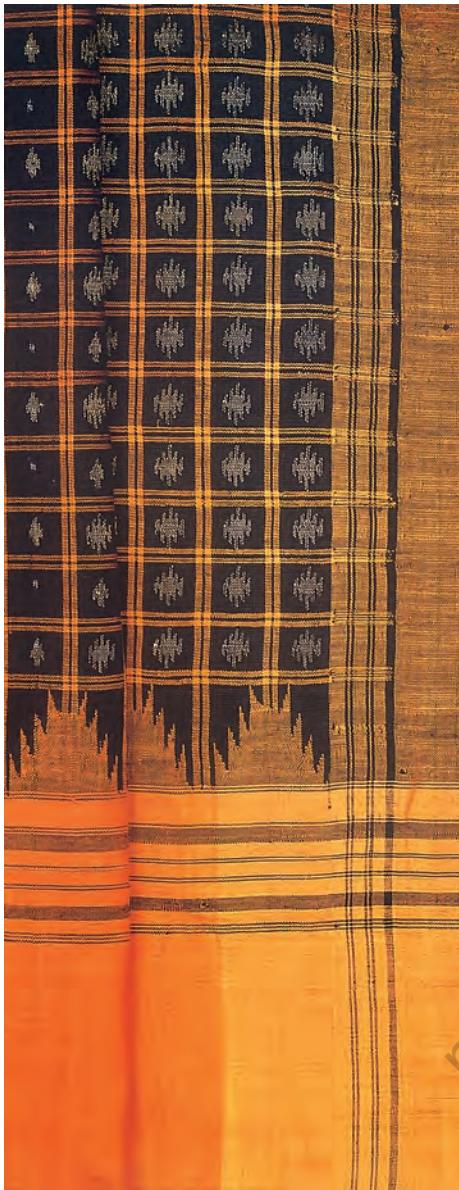
चित्र 5.10
इस तरह की इक़त बुनाई की अभिरचनाओं को उपमहाद्वीप तथा दक्षिण-पूर्व एशिया के कई तटीय उत्पादन केंद्रों में अपनाया गया तथा उनमें सुधार किए गए।

➲ अपने वर्णन में इब्न बतूता ने इन गतिविधियों को उजागर क्यों किया?

बाज़ार मात्र आर्थिक विनिमय के स्थान ही नहीं थे बल्कि ये सामाजिक तथा आर्थिक गतिविधियों के केंद्र भी थे। अधिकांश बाज़ारों में एक मस्जिद तथा एक मंदिर होता था और उनमें से कम से कम कुछ में तो नर्तकों, संगीतकारों तथा गायकों के सार्वजनिक प्रदर्शन के लिए स्थान भी चिह्नित थे।

हालाँकि इब्न बतूता की शहरों की समृद्धि का वर्णन करने में अधिक रुचि नहीं थी, इतिहासकारों ने उसके वृत्तांत का प्रयोग यह तर्क देने में किया है कि शहर अपनी संपत्ति का एक बड़ा भाग गाँवों से अधिशेष के अधिग्रहण से प्राप्त करते थे। इब्न बतूता ने पाया कि भारतीय कृषि के इतना अधिक उत्पादनकारी होने का कारण मिट्टी का उपजाऊपन था, जो किसानों के लिए वर्ष में दो फसलें उगाना संभव करता था। उसने यह भी ध्यान दिया कि उपमहाद्वीप व्यापार तथा वाणिज्य के अंतर एशियाई तंत्रों से भली-भाँति जुड़ा हुआ था। भारतीय माल की मध्य तथा दक्षिण-पूर्व एशिया, दोनों में बहुत माँग थी जिससे शिल्पकारों तथा व्यापारियों को भारी मुनाफ़ा होता था। भारतीय कपड़ों, विशेषरूप से सूती कपड़ा, महीन मलमल, रेशम, ज़री तथा साटन की अत्यधिक माँग थी। इब्न बतूता हमें बताता है कि महीन मलमल की कई किस्में इतनी अधिक मँहगी थीं कि उन्हें अमीर वर्ग के तथा बहुत धनाढ्य लोग ही पहन सकते थे।

स्रोत 9

बाज़ार में संगीत

यहाँ इब्न बतूता द्वारा दौलताबाद के विवरण से एक अंश दिया जा रहा है:

दौलताबाद में पुरुष और महिला गायकों के लिए एक बाज़ार है जिसे *ताराबबाद* कहते हैं। यह सबसे विशाल और सुंदर बाज़ारों में से एक है। यहाँ बहुत सी दुकानें हैं और प्रत्येक दुकान में एक ऐसा दरवाज़ा है जो मालिक के आवास में खुलता है... दुकानों को कालीनों से सजाया गया है और दुकान के मध्य में झूला है जिस पर गायिका बैठती है। वह सभी प्रकार की भव्य वस्तुओं से सजी होती है और उसकी सेविकाएँ उसे झूला झुलाती हैं। बाज़ार के मध्य में एक विशाल गुंबद खड़ा है जिसमें कालीन बिछाए गए हैं और सजाया गया है इसमें प्रत्येक गुरुवार सुबह की इबादत के बाद संगीतकारों के प्रमुख, अपने सेवकों और दासों के साथ स्थान ग्रहण करते हैं। गायिकाएँ एक के बाद एक झुंडों में उनके समक्ष आकर सूर्यास्त का गीत गाती और नाचती हैं जिसके पश्चात वे चले जाते हैं। इस बाज़ार में इबादत के लिए मस्जिदें बनी हुई हैं... हिंदू शासकों में से एक... जब भी बाज़ार से गुजरता था, गुंबद में उतर कर आता था और गायिकाएँ उसके समक्ष गान प्रस्तुत करती थी। यहाँ तक कि कई मुस्लिम शासक भी ऐसा ही करते थे। आपके विचार में इब्न बतूता ने अपने विवरण में इन गतिविधियों को रेखांकित क्यों किया?

5.3. संचार की एक अनूठी प्रणाली

व्यापारियों को प्रोत्साहित करने के लिए राज्य विशेष उपाय करता था। लगभग सभी व्यापारिक मार्गों पर सराय तथा विश्राम गृह स्थापित किए गए थे। इब्न बतूता डाक प्रणाली की कार्यकुशलता देखकर चकित हुआ। इससे व्यापारियों के लिए न केवल लंबी दूरी तक सूचना भेजना और उधार प्रेषित करना संभव हुआ बल्कि अल्प सूचना पर माल भेजना भी। डाक प्रणाली इतनी कुशल थी कि जहाँ सिंध से दिल्ली की यात्रा में पचास दिन लगते थे वहीं गुप्तचरों की खबरें सुलतान तक इस डाक व्यवस्था के माध्यम से मात्र पाँच दिनों में पहुँच जाती थीं।

स्रोत 10

घोड़े पर और पैदल

डाक व्यवस्था का वर्णन इब्न बतूता इस प्रकार करता है:

भारत में दो प्रकार की डाक व्यवस्था है। अश्व डाक व्यवस्था जिसे *उलुक* कहा जाता है, हर चार मील की दूरी पर स्थापित राजकीय घोड़ों द्वारा चालित होती है। पैदल डाक व्यवस्था के प्रति मील तीन अवस्थान होते हैं; इसे *दावा* कहा जाता है, और यह एक मील का एक-तिहाई होता है... अब, हर तीन मील पर घनी आबादी वाला एक गाँव होता है जिसके बाहर तीन मंडप होते हैं जिनमें लोग कार्य आरंभ के लिए तैयार बैठे रहते हैं। उनमें से प्रत्येक के पास दो हाथ लंबी एक छड़ होती है जिसके ऊपर ताँबे की घंटियाँ लगी होती हैं। जब संदेशवाहक शहर से यात्रा आरंभ करता है तो एक हाथ में पत्र तथा दूसरे में घंटियों सहित छड़ लिए वह क्षमतानुसार तेज़ भागता है। जब मंडप में बैठे लोग घंटियों की आवाज़ सुनते हैं तो वे तैयार हो जाते हैं। जैसे ही संदेशवाहक उनके पास पहुँचता है, उनमें से एक उससे पत्र लेता है और वह छड़ हिलाते हुए पूरी ताकत से दौड़ता है, जब तक वह अगले दावा तक नहीं पहुँच जाता। पत्र के अपने गंतव्य स्थान तक पहुँचने तक यही प्रक्रिया चलती रहती है। यह पैदल डाक व्यवस्था अश्व डाक व्यवस्था से अधिक-तीव्र होती है; और इसका प्रयोग अकसर खुरासान के फलों के परिवहन के लिए होता है, जिन्हें भारत में बहुत पसंद किया जाता है।

➲ क्या आपको लगता है कि पैदल डाक व्यवस्था पूरे उपमहाद्वीप में संचालित की जाती होगी?

➲ चर्चा कीजिए...

इब्न बतूता लोगों के लिए ऐसी वस्तुओं और स्थितियों के वर्णन की समस्या को कैसे हल करता था, जिनसे वे अनभिज्ञ थे और जिन्हें उन्होंने अनुभव नहीं किया था?

एक विचित्र देश?

1440 के दशक में लिखा गया अब्दुर रज़्ज़ाक़ का यात्रा वृत्तांत संवेगों और अवबोधनों का एक रोचक मिश्रण है। एक ओर केरल में कालीकट (आधुनिक कोज़ीकोड), बंदरगाह पर उसने जो देखा उसे प्रशंसनीय नहीं माना, "यहाँ ऐसे लोग बसे हुए थे जिनकी कल्पना मैंने कभी भी नहीं की थी।" इन लोगों को उसने एक 'विचित्र देश' बताया। कालांतर में अपनी भारत यात्रा के दौरान वह मंगलौर आया, और पश्चिमी घाट को पार किया। यहाँ उसने एक मंदिर देखा जिसने उसे प्रशंसा से भर दिया–

> मंगलौर से नौ मील के भीतर ही, मैंने एक ऐसा पूजा-स्थल देखा जो पूरे विश्व में अतुलनीय है। यह वर्गाकार था जिसकी प्रत्येक भुजा लगभग दस गज, ऊँचाई पाँच गज़ थी और जो चार द्वार-मंडपों के साथ, पूरी तरह से ढले हुए काँसे से ढँका हुआ था। प्रवेशद्वार के द्वार-मंडप में सोने की बनी एक मूर्ति थी जो मानव आकृति जैसी तथा आदमकद थी। इसकी दोनों आँखों में काले रंग के माणिक इतनी चतुराई से लगाए गए थे कि प्रतीत होता था मानो वह देख सकती हों। इस शिल्प और कारीगरी के क्या कहने!

6. बर्नियर तथा "अपविकसित" पूर्व

जहाँ इब्न बतूता ने हर उस चीज़ का वर्णन करने का निश्चय किया जिसने उसे अपने अनूठेपन के कारण प्रभावित और उत्सुक किया, वहीं बर्नियर एक भिन्न बुद्धिजीवी परंपरा से संबंधित था। उसने भारत में जो भी देखा, वह उसकी सामान्य रूप से यूरोप और विशेष रूप से फ्रांस में व्याप्त स्थितियों से तुलना तथा भिन्नता को उजागर करने के प्रति अधिक चिंतित था, विशेष रूप से वे स्थितियाँ जिन्हें उसने अवसादकारी पाया। उसका विचार नीति-निर्माताओं तथा बुद्धिजीवी वर्ग को प्रभावित करने का था ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि वे ऐसे निर्णय ले सकें जिन्हें वह ''सही'' मानता था।

बर्नियर के ग्रंथ *ट्रैवल्स इन द मुग़ल एम्पायर* अपने गहन प्रेक्षण, आलोचनात्मक अंतर्दृष्टि तथा गहन चिंतन के लिए उल्लेखनीय है। उसके वृत्तांत में की गई चर्चाओं में मुग़लों के इतिहास को एक प्रकार के वैश्विक ढाँचे में स्थापित करने का प्रयास किया गया है। वह निरंतर मुग़लकालीन भारत की तुलना तत्कालीन यूरोप से करता रहा, सामान्यतया यूरोप की श्रेष्ठता को रेखांकित करते हुए। उसका भारत का चित्रण द्वि-विपरीतता के नमूने पर आधारित है, जहाँ भारत को यूरोप के प्रतिलोम के रूप में दिखाया गया है, या फिर यूरोप का ''विपरीत'' जैसा कि कुछ इतिहासकार परिभाषित करते हैं। उसने जो भिन्नताएँ महसूस कीं उन्हें भी पदानुक्रम के अनुसार क्रमबद्ध किया, जिससे भारत, पश्चिमी दुनिया को निम्न कोटि का प्रतीत हो।

व्यापक गरीबी

पेलसर्ट नामक एक डच यात्री ने सत्रहवीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में उपमहाद्वीप की यात्रा की थी। बर्नियर की ही तरह वह भी लोगों में व्यापक गरीबी देखकर अचंभित था। लोग "इतनी अधिक तथा दुखद गरीबी" में रहते हैं कि "इनके जीवन को मात्र नितांत अभाव के घर तथा कठोर कष्ट दुर्भाग्य के आवास के रूप में चित्रित अथवा ठीक प्रकार से वर्णित किया जा सकता है।" राज्य को उत्तरदायी ठहराते हुए, वह कहता है: "कृषकों को इतना अधिक निचोड़ा जाता है कि पेट भरने के लिए उनके पास सूखी रोटी भी मुश्किल से बचती है।"

6.1 भूमि स्वामित्व का प्रश्न

बर्नियर के अनुसार भारत और यूरोप के बीच मूल भिन्नताओं में से एक भारत में निजी भूस्वामित्व का अभाव था। उसका निजी स्वामित्व के गुणों में दृढ़ विश्वास था और उसने भूमि पर राजकीय स्वामित्व को राज्य तथा उसके निवासियों, दोनों के लिए हानिकारक माना। उसे यह लगा कि मुग़ल साम्राज्य में सम्राट सारी भूमि का स्वामी था जो इसे अपने अमीरों के बीच बाँटता था, और इसके अर्थव्यवस्था और समाज के लिए अनर्थकारी परिणाम होते थे। इस प्रकार का अवबोधन बर्नियर तक ही सीमित नहीं था बल्कि सोलहवीं तथा सत्रहवीं शताब्दी के अधिकांश यात्रियों के वृत्तांतों में मिलता है।

राजकीय भूस्वामित्व के कारण, बर्नियर तर्क देता है, भूधारक अपने बच्चों को भूमि नहीं दे सकते थे। इसलिए वे उत्पादन के स्तर को बनाए रखने और उसमें बढ़ोत्तरी के लिए दूरगामी निवेश के प्रति उदासीन थे।

इस प्रकार, निजी भूस्वामित्व के अभाव ने ''बेहतर'' भूधारकों के वर्ग के उदय (जैसा कि पश्चिमी यूरोप में) को रोका जो भूमि के रखरखाव व बेहतरी के प्रति सजग रहते। इसी के चलते कृषि का समान रूप से विनाश, किसानों का असीम उत्पीड़न तथा समाज के सभी वर्गों के जीवन स्तर में अनवरत पतन की स्थिति उत्पन्न हुई है, सिवाय शासक वर्ग के।

स्रोत 11

ग़रीब किसान

यहाँ बर्नियर द्वारा ग्रामीण अंचल में कृषकों के विषय में दिए गए विवरण से एक उद्धरण दिया जा रहा है:

> हिंदुस्तान के साम्राज्य के विशाल ग्रामीण अंचलों में से कई केवल रेतीली भूमियाँ या बंजर पर्वत ही हैं। यहाँ की खेती अच्छी नहीं है और इन इलाकों की आबादी भी कम है। यहाँ तक कि कृषियोग्य भूमि का एक बड़ा हिस्सा भी श्रमिकों के अभाव में कृषि विहीन रह जाता है; इनमें से कई श्रमिक गवर्नरों द्वारा किए गए बुरे व्यवहार के फलस्वरूप मर जाते हैं। गरीब लोग जब अपने लोभी स्वामियों की माँगों को पूरा करने में असमर्थ हो जाते हैं तो उन्हें न केवल जीवन-निर्वहन के साधनों से वंचित कर दिया जाता है, बल्कि उन्हें अपने बच्चों से भी हाथ धोना पड़ता है, जिन्हें दास बना कर ले जाया जाता है। इस प्रकार ऐसा होता है कि इस अत्यंत निरंकुशता से हताश हो किसान गाँव छोड़कर चले जाते हैं।

इस उद्धरण में बर्नियर राज्य और समाज से संबंधित यूरोप में प्रचलित तत्कालीन विवादों में भाग ले रहा था, और उसका प्रयास था कि मुग़ल कालीन भारत से संबंधित उसका विवरण यूरोप में उन लोगों के लिए एक चेतावनी का कार्य करेगा जो निजी स्वामित्व की "अच्छाइयों" को स्वीकार नहीं करते थे।

➲ बर्नियर के अनुसार उपमहाद्वीप में किसानों को किन-किन समस्याओं से जूझना पड़ता था? क्या आपको लगता है कि उसका विवरण उसके पक्ष को सुदृढ़ करने में सहायक होता?

इसी के विस्तार के रूप में बर्नियर भारतीय समाज को दरिद्र लोगों के समरूप जनसमूह से बना वर्णित करता है, जो एक बहुत अमीर तथा शक्तिशाली शासक वर्ग, जो अल्पसंख्यक होते हैं, के द्वारा अधीन बनाया जाता है। गरीबों में सबसे गरीब तथा अमीरों में सबसे अमीर व्यक्ति के बीच नाममात्र को भी कोई सामाजिक समूह या वर्ग नहीं था। बर्नियर बहुत विश्वास से कहता है, "भारत में मध्य की स्थिति के लोग नहीं है।"

चित्र 5.11
उन्नीसवीं शताब्दी के ऐसे चित्रों ने अपरिवर्तनशील ग्रामीण समाज की धारणा को दृढ़ता प्रदान की।

स्रोत 12

यूरोप के लिए एक चेतावनी

बर्नियर चेतावनी देता है कि यदि यूरोपीय शासकों ने मुग़ल ढाँचे का अनुसरण किया तो :

> उनके राज्य इस प्रकार अच्छी तरह से जुते और बसे हुए, इतनी अच्छी तरह से निर्मित, इतने समृद्ध, इतने सुशिष्ट तथा फलते-फूलते नहीं रह जाएँगे जैसा कि हम उन्हें देखते हैं। दूसरी दृष्टि से हमारे शासक अमीर और शक्तिशाली हैं; और हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि उनकी और बेहतर और राजसी ढंग से सेवा हो। वे जल्द ही रेगिस्तान तथा निर्जन स्थानों के, भिखारियों तथा क्रूर लोगों के राजा बनकर रह जाएँगे जैसे कि वे जिनके विषय में मैंने वर्णन किया है। (मुग़ल शासक) ... हम उन महान शहरों और नगरों को खराब हवा के कारण न रहने योग्य अवस्था में पाएँगे, तथा विनाश की स्थिति में, जिनके जीर्णोद्धार की किसी को चिंता नहीं है, व्यक्त टीले और झाड़ियों अथवा घातक दलदल से भरे हुए खेत, जैसा कि पहले ही बताया गया है।

➲ बर्नियर सर्वनाश के दृश्य का चित्रण किस प्रकार करता है? जब आप अध्याय 8 तथा 9 पढ़ लें, तब आप इस विवरण पर फिर आइएगा और फिर इसका आकलन कीजिएगा।

तो बर्नियर ने मुग़ल साम्राज्य को इस रूप में देखा–इसका राजा "भिखारियों और क्रूर लोगों" का राजा था; इसके शहर और नगर विनष्ट तथा "खराब हवा" से दूषित थे; और इसके खेत "झाड़ीदार" तथा "घातक दलदल" से भरे हुए थे और इसका मात्र एक ही कारण था– राजकीय भूस्वामित्व।

आश्चर्य की बात यह है कि एक भी सरकारी मुग़ल दस्तावेज़ यह इंगित नहीं करता कि राज्य ही भूमि का एकमात्र स्वामी था। उदाहरण के लिए, सोलहवीं शताब्दी में अकबर के काल का सरकारी इतिहासकार अबुल फ़ज़्ल भूमि राजस्व को 'राजत्व का पारिश्रमिक' बताता है जो राजा द्वारा अपनी प्रजा को सुरक्षा प्रदान करने के बदले की गई माँग प्रतीत होती है न कि अपने स्वामित्व वाली भूमि पर लगान। ऐसा संभव है कि यूरोपीय यात्री ऐसी माँगों को लगान मानते थे क्योंकि भूमि राजस्व की माँग अकसर बहुत अधिक होती थी। लेकिन असल में यह न तो लगान था, न ही भूमिकर, बल्कि उपज पर लगने वाला कर था (अधिक जानकारी के लिए अध्याय 8 देखिए)।

बर्नियर के विवरणों ने अठारहवीं शताब्दी से पश्चिमी विचारकों को प्रभावित किया। उदाहरण के लिए, फ्रांसीसी दार्शनिक मॉन्टेस्क्यू ने उसके वृत्तांत का प्रयोग प्राच्य निरंकुशवाद के सिद्धांत को विकसित करने में किया, जिसके अनुसार एशिया (प्राच्य अथवा पूर्व) में शासक अपनी प्रजा के ऊपर निर्बाध प्रभुत्व का उपभोग करते थे, जिसे दासता और गरीबी की स्थितियों में रखा जाता था। इस तर्क का आधार यह था कि सारी भूमि पर राजा का स्वामित्व होता था तथा निजी संपत्ति अस्तित्व में नहीं थी। इस दृष्टिकोण के अनुसार राजा और उसके अमीर वर्ग को छोड़ प्रत्येक व्यक्ति मुश्किल से गुजर-बसर कर पाता था।

उन्नीसवीं शताब्दी में कार्ल मार्क्स ने इस विचार को एशियाई उत्पादन शैली के सिद्धांत के रूप में और आगे बढ़ाया। उसने यह तर्क दिया कि भारत (तथा अन्य एशियाई देशों) में उपनिवेशवाद से पहले अधिशेष का अधिग्रहण राज्य द्वारा होता था। इससे एक ऐसे समाज का उद्‌भव हुआ जो बड़ी संख्या में स्वायत्त तथा (आंतरिक रूप से) समतावादी ग्रामीण समुदायों से बना था। इन ग्रामीण समुदायों पर राजकीय दरबार का नियंत्रण होता था और जब तक अधिशेष की आपूर्ति निर्विघ्न रूप से जारी रहती थी, इनकी स्वायत्तता का सम्मान किया जाता था। यह एक निष्क्रिय प्रणाली मानी जाती थी।

परंतु, जैसा कि हम देखेंगे (अध्याय 8) ग्रामीण समाज का यह चित्रण सच्चाई से बहुत दूर था। बल्कि सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी में ग्रामीण समाज में चारित्रिक रूप से बड़े पैमाने पर सामाजिक और आर्थिक विभेद था। एक ओर बड़े ज़मींदार थे जो भूमि पर उच्चाधिकारों का उपभोग करते थे और दूसरी ओर "अस्पृश्य" भूमिविहीन श्रमिक (बलाहार)। इन दोनों

के बीच में बड़ा किसान था जो किराए के श्रम का प्रयोग करता था और माल उत्पादन में संलग्न रहता था; साथ ही अपेक्षाकृत छोटे किसान भी थे जो मुश्किल से ही निर्वहन लायक उत्पादन कर पाते थे।

6.3 एक अधिक जटिल सामाजिक सच्चाई

हालाँकि मुग़ल राज्य को निरंकुश रूप देने की तन्मयता स्पष्ट है, लेकिन उसके विवरण कभी-कभी एक अधिक जटिल सामाजिक सच्चाई की ओर इशारा करते हैं। उदाहरण के लिए वह कहता है कि शिल्पकारों के पास अपने उत्पादों को बेहतर बनाने का कोई प्रोत्साहन नहीं था क्योंकि मुनाफ़े का अधिग्रहण राज्य द्वारा कर लिया जाता था। इसलिए उत्पादन हर जगह पतनोन्मुख था। साथ ही वह यह भी मानता है कि पूरे विश्व से बड़ी मात्रा में बहुमूल्य धातुएँ भारत में आती थीं क्योंकि उत्पादों का सोने और चाँदी के बदले निर्यात होता था। वह एक समृद्ध व्यापारिक समुदाय जो लंबी दूरी के विनिमय से संलग्न था, के अस्तित्व को भी रेखांकित करता है।

स्रोत 13

एक भिन्न सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य

बर्नियर के वृत्तांत से लिए गए इस उद्धरण को पढ़िए जिसमें कृषि तथा शिल्प-उत्पादन दोनों का विवरण दिया गया है:

> यह ध्यान देना आवश्यक है कि इस देश के विस्तृत भू-भाग का अधिकांश भाग अत्यधिक उपजाऊ है; उदाहरण के लिए, बंगाल का विशाल राज्य जो मिस्र से न केवल चावल, मकई तथा जीवन की अन्य आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन में, बल्कि उन अनगिनत वाणिज्यिक वस्तुओं के संदर्भ में, जो मिस्र में भी नहीं उगाई जातीं, जैसे रेशम, कपास तथा नील कहीं आगे हैं। भारत के कई ऐसे भाग भी हैं जहाँ जनसंख्या पर्याप्त है और भूमि पर खेती अच्छी होती है; और जहाँ एक शिल्पकार जो हालाँकि मूल रूप से आलसी होता है, आवश्यकता से या किसी अन्य कारण से अपने आप को गलीचों, ज़री, कसीदाकारी कढ़ाई, सोने और चाँदी के वस्त्रों, तथा विभिन्न प्रकार के रेशम तथा सूती वस्त्रों, जो देश में भी प्रयोग होते हैं और विदेश में निर्यात किए जाते हैं, के निर्माण का कार्य करने के लिए बाध्य हो जाता है।
>
> यह भी नहीं भूलना चाहिए कि पूरे विश्व के सभी भागों में संचलन के पश्चात सोना और चाँदी भारत में आकर कुछ हद तक खो जाता है।

➲ इस उद्धरण में दिया गया विवरण स्रोत 11 में दिए गए विवरण से किन मायनों में भिन्न है?

चित्र 5.12
सोने का चम्मच जिसमें पन्ने एवं माणिक जड़े हुए हैं। मुग़लकालीन शिल्पकारों की ख़ास दक्षता का यह अच्छा उदाहरण है।

स्रोत 14

राजकीय कारखाने

संभवत: बर्नियर एकमात्र ऐसा इतिहासकार है जो राजकीय कारखानों की कार्यप्रणाली का विस्तृत विवरण प्रदान करता है:

> कई स्थानों पर बड़े कक्ष दिखाई देते हैं जिन्हें कारखाना अथवा शिल्पकारों की कार्यशाला कहते हैं। एक कक्ष में कसीदाकार एक मास्टर के निरीक्षण में व्यस्तता से कार्यरत रहते हैं। एक अन्य में आप सुनारों को देखते हैं; तीसरे में, चित्रकार; चौथे में, प्रलाक्षा रस का रोगन लगाने वाले; पाँचवें में बढ़ई, खरादी, दर्जी तथा जूते बनाने वाले; छठे में रेशम, जरी तथा महीन मलमल का काम करने वाले...
>
> शिल्पकार अपने कारखानों में हर रोज़ सुबह आते हैं जहाँ वे पूरे दिन कार्यरत रहते हैं; और शाम को अपने-अपने घर चले जाते हैं। इसी निश्चेष्ट नियमित ढंग से उनका समय बीतता जाता है; कोई भी जीवन की उन स्थितियों में सुधार करने का इच्छुक नहीं है जिनमें वह पैदा हुआ था।

➲ बर्नियर इस विचार को किस प्रकार प्रेषित करता है कि हालाँकि हर तरफ़ बहुत सक्रियता है पर उन्नति बहुत कम?

सत्रहवीं शताब्दी में जनसंख्या का लगभग पंद्रह प्रतिशत भाग नगरों में रहता था। यह औसतन उसी समय पश्चिमी यूरोप की नगरीय जनसंख्या के अनुपात से अधिक था। इतने पर भी, बर्नियर मुग़लकालीन शहरों को "शिविर नगर" कहता है, जिससे उसका आशय उन नगरों से था जो अपने अस्तित्व और बने रहने के लिए राजकीय शिविर पर निर्भर थे। उसका विश्वास था कि ये राजकीय दरबार के आगमन के साथ अस्तित्व में आते थे और इसके कहीं और चले जाने के बाद तेज़ी से पतनोन्मुख हो जाते थे। उसने यह भी सुझाया कि इनकी सामाजिक और आर्थिक नीव व्यवहार्य नहीं होती थी और ये राजकीय प्रश्रय पर आश्रित रहते थे।

भूस्वामित्व के प्रश्न की तरह ही बर्नियर एक अतिसरलीकृत चित्रण प्रस्तुत कर रहा था। वास्तव में सभी प्रकार के नगर अस्तित्व में थे: उत्पादन केंद्र, व्यापारिक नगर, बंदरगाह नगर, धार्मिक केंद्र, तीर्थ स्थान आदि। इनका अस्तित्व समृद्ध व्यापारिक समुदायों तथा व्यावसायिक वर्गों के अस्तित्व का सूचक है।

व्यापारी अक्सर मज़बूत सामुदायिक अथवा बंधुत्व के संबंधों से जुड़े होते थे और अपनी जाति तथा व्यावसायिक संस्थाओं के माध्यम से संगठित रहते थे। पश्चिमी भारत में ऐसे समूहों को महाजन कहा जाता था और उनके मुखिया को सेठ। अहमदाबाद जैसे शहरी केंद्रों में सभी महाजनों का सामूहिक प्रतिनिधित्व व्यापारिक समुदाय के मुखिया द्वारा होता था जिसे नगर सेठ कहा जाता था।

अन्य शहरी समूहों में व्यावसायिक वर्ग जैसे चिकित्सक (हकीम अथवा वैद्य), अध्यापक (पंडित या मुल्ला), अधिवक्ता (वकील), चित्रकार, वास्तुविद, संगीतकार, सुलेखक आदि सम्मिलित थे। जहाँ कई राजकीय प्रश्रय पर आश्रित थे, कई अन्य संरक्षकों या भीड़भाड़ वाले बाज़ार में आम लोगों की सेवा द्वारा जीवनयापन करते थे।

➲ चर्चा कीजिए...

आपके विचार में बर्नियर जैसे विद्वानों ने भारत की यूरोप से तुलना क्यों की?

7. महिलाएँ : दासियाँ, सती तथा श्रमिक

जिन यात्रियों ने अपने लिखित वृत्तांत छोड़े वे सामान्यतया पुरुष थे जिन्हें उपमहाद्वीप में महिलाओं की स्थिति का विषय रुचिकर और कभी-कभी जिज्ञासापूर्ण लगता था। कभी-कभी वे सामाजिक पक्षपात को "सामान्य" परिस्थिति मान लेते थे। उदाहरण के लिए, बाज़ारों में दास किसी भी अन्य वस्तु की तरह खुले आम बेचे जाते थे और नियमित रूप से भेंटस्वरूप दिए जाते थे। जब इब्न बतूता सिंध पहुँचा तो उसने सुल्तान मुहम्मद बिन तुग़लक के लिए भेंटस्वरूप "घोड़े, ऊँट तथा दास" खरीदे। जब वह मुल्तान पहुँचा तो उसने गवर्नर को "किशमिश के बादाम के साथ एक दास और घोड़ा" भेंट के रूप में दिए। इब्न बतूता बताता है कि मुहम्मद बिन तुग़लक नसीरुद्दीन नामक धर्मोपदेशक के प्रवचन से इतना प्रसन्न हुआ कि उसे "एक लाख टके (मुद्रा) तथा दो सौ दास" दे दिए।

इब्न बतूता के विवरण से प्रतीत होता है कि दासों में काफ़ी विभेद था। सुल्तान की सेवा में कार्यरत कुछ दासियाँ संगीत और गायन में निपुण थीं, और इब्न बतूता सुल्तान की बहन की शादी के अवसर पर उनके प्रदर्शन से खूब आनंदित हुआ। सुल्तान अपने अमीरों पर नज़र रखने के लिए दासियों को भी नियुक्त करता था।

दासों को सामान्यत: घरेलू श्रम के लिए ही इस्तेमाल किया जाता था, और इब्न बतूता ने इनकी सेवाओं को, पालकी या डोले में पुरुषों और महिलाओं को ले जाने में विशेष रूप से अपरिहार्य पाया। दासों की कीमत, विशेष रूप से उन दासियों की, जिनकी आवश्यकता घरेलू श्रम के लिए थी, बहुत कम होती थी और अधिकांश परिवार जो उन्हें रख पाने में समर्थ थे, कम से कम एक या दो को तो रखते ही थे।

सभी समकालीन यूरोपीय यात्रियों तथा लेखकों के लिए, महिलाओं से किया जाने वाला बर्ताव अकसर पश्चिमी तथा पूर्वी समाजों के बीच भिन्नता का एक महत्त्वपूर्ण संकेतक माना जाता था। इसलिए यह आश्चर्यजनक बात नहीं है कि बर्नियर ने सती प्रथा को विस्तृत विवरण के लिए चुना। उसने लिखा कि हालाँकि कुछ महिलाएँ प्रसन्नता से मृत्यु को गले लगा लेती थीं, अन्य को मरने के लिए बाध्य किया जाता था।

लेकिन महिलाओं का जीवन सती प्रथा के अलावा कई और चीज़ों के चारों ओर घूमता था। उनका श्रम कृषि तथा कृषि के

स्रोत 15

दासियाँ

इब्न बतूता हमें बताता है:

> यह सम्राट की आदत है... हर बड़े या छोटे अमीर के साथ अपने दासों में से एक को रखने की जो उसके अमीरों की मुखबिरी करता है। वह महिला सफाई कर्मचारियों को भी नियुक्त करता है जो बिना बताए घर में दाखिल हो जाती हैं: और दासियों के पास जो भी जानकारी होती है, वे उन्हें दे देती हैं।

अधिकांश दासियों को हमलों और अभियानों के दौरान बलपूर्वक प्राप्त किया जाता था।

स्रोत 16

सती बालिका

यह संभवत: बर्नियर के वृत्तांत के सबसे मार्मिक विवरणों में से एक है:

> लाहौर में मैंने एक बहुत ही सुंदर अल्पवयस्क विधवा जिसकी आयु मेरे विचार में बारह वर्ष से अधिक नहीं थी, की बलि होते हुए देखी। उस भयानक नर्क की ओर जाते हुए वह असहाय छोटी बच्ची जीवित से अधिक मृत प्रतीत हो रही थी; उसके मस्तिष्क की व्यथा का वर्णन नहीं किया जा सकता; वह काँपते हुए बुरी तरह से रो रही थी; लेकिन तीन या चार ब्राह्मण, एक बूढ़ी औरत, जिसने उसे अपनी आस्तीन के नीचे दबाया हुआ था, की सहायता से उस अनिच्छुक पीड़िता को जबरन घातक स्थल की ओर ले गए, उसे लकड़ियों पर बैठाया, उसके हाथ और पैर बाँध दिए ताकि वह भाग न जाए और इस स्थिति में उस मासूम प्राणी को ज़िन्दा जला दिया गया। मैं अपनी भावनाओं को दबाने में और उनके कोलाहलपूर्ण तथा व्यर्थ के क्रोध को बाहर आने से रोकने में असमर्थ था...

➲ चर्चा कीजिए

आपके विचार में सामान्य महिला श्रमिकों के जीवन ने इब्न बतूता और बर्नियर जैसे यात्रियों का ध्यान अपनी ओर क्यों नहीं खींचा?

अलावा होने वाले उत्पादन, दोनों में महत्त्वपूर्ण था। व्यापारिक परिवारों से आने वाली महिलाएँ व्यापारिक गतिविधियों में हिस्सा लेती थीं, यहाँ तक कि कभी-कभी वाणिज्यिक विवादों को अदालत के सामने भी ले जाती थीं। अत: यह असंभाव्य लगता है कि महिलाओं को उनके घरों के खास स्थानों तक परिसीमित कर रखा जाता था।

आपने देखा होगा कि यात्री वृत्तांत इन शताब्दियों में पुरुषों और महिलाओं के जीवन की एक रोचक झाँकी प्रस्तुत करते हैं। इन वृत्तांतों से हम बहुत सी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं, पर इनमें सामाजिक जीवन के कई आयाम अनछुए रह जाते हैं, या फिर एक दृष्टिकोण विशेष से देखे जाते हैं जिन्हें इन वृत्तांतों को पढ़ते हुए ध्यान में रखना आवश्यक है।

साथ ही उपमहाद्वीप के पुरुषों (और संभवत: महिलाओं) के अनुभव और प्रेक्षण अपेक्षाकृत अज्ञात हैं जिन्होंने समुद्रों और पर्वतों को पार किया और उपमहाद्वीप से परे क्षेत्रों में साहसिक यात्राएँ कीं। उन्होंने क्या देखा और सुना? सुदूर क्षेत्रों के लोगों के साथ उनके संबंध किस प्रकार ढले। वे किन भाषाओं का प्रयोग करते थे? उम्मीद है कि इन पर और अन्य प्रश्नों पर आने वाले वर्षों में इतिहासकार योजनापूर्ण तरीके से ध्यान केंद्रित करेंगे।

चित्र 5.13
मथुरा से मूर्ति का एक नमूना जिसमें यात्री दर्शाए गए हैं।

➲ यहाँ यातायात के कौन-कौन से साधन अपनाए गए हैं?

काल-रेखा
कुछ यात्री जिन्होंने वृत्तांत छोड़े

दसवीं-ग्यारहवीं शताब्दियाँ	
973–1048	मोहम्मद इब्न अहमद अबू रेहान अल बिरूनी (उज़्बेकिस्तान से)
तेरहवीं शताब्दी	
1254–1323	मार्को पोलो (इटली से)
चौदहवीं शताब्दी	
1304–77	इब्न बतूता (मोरक्को से)
पंद्रहवीं शताब्दी	
1413–82	अब्द अल-रज़्ज़ाक कमाल अल-दिन इब्न इस्हाक़ अल-समरक़ंदी (समरक़ंद से)
1466–72 (भारत में बिताए वर्ष)	अफनासी निकितिच निकितिन (पंद्रहवी शताब्दी, रूस से)
सोलहवीं शताब्दी	
1518 (भारत की यात्रा)	दूरते बारबोसा, मृत्यु 1521 (पुर्तगाल से)
1562 (मृत्यु का वर्ष)	सयदी अली रेइस (तुर्की से)
1536–1600	अंतोनियो मानसेरेते (स्पेन से)
सत्रहवीं शताब्दी	
1626–31 (भारत में बिताए वर्ष)	महमूद वली बलख़ी (बल्ख़ से)
1600–67	पीटर मुंडी (इंग्लैंड से)
1605–89	ज्यौं बैप्टिस्ट तैवर्नियर (फ्रांस से)
1620–88	फ्रांस्वा बर्नीयर (फ्रांस से)

नोट : जहाँ कोई अन्य संकेत नहीं है तिथियाँ यात्री के जीवन काल को बता रही हैं।

उत्तर दीजिए (लगभग 100 से 150 शब्दों में)

1. *किताब-उल-हिन्द* पर एक लेख लिखिए।
2. इब्न बतूता और बर्नियर ने जिन दृष्टिकोणों से भारत में अपनी यात्राओं के वृत्तांत लिखे थे, उनकी तुलना कीजिए तथा अंतर बताइए।
3. बर्नियर के वृत्तांत से उभरने वाले शहरी केंद्रों के चित्र पर चर्चा कीजिए।
4. इब्न बतूता द्वारा दास प्रथा के संबंध में दिए गए साक्ष्यों का विवेचन कीजिए।
5. सती प्रथा के कौन से तत्वों ने बर्नियर का ध्यान अपनी ओर खींचा?

निम्नलिखित पर एक लघु निबंध लिखिए (लगभग 250-300 शब्दों में)

6. जाति व्यवस्था के संबंध में अल-बिरूनी की व्याख्या पर चर्चा कीजिए।
7. क्या आपको लगता है कि समकालीन शहरी केंद्रों में जीवन-शैली की सही जानकारी प्राप्त करने में इब्न बतूता का वृत्तांत सहायक है? अपने उत्तर के कारण दीजिए।
8. चर्चा कीजिए कि बर्नियर का वृत्तांत किस सीमा तक इतिहासकारों को समकालीन ग्रामीण समाज को पुनर्निर्मित करने में सक्षम करता है?
9. यह बर्नियर से लिया गया एक उद्धरण है:

> ऐसे लोगों द्वारा तैयार सुंदर शिल्पकारीगरी के बहुत उदाहरण हैं, जिनके पास औज़ारों का अभाव है, और जिनके विषय में यह भी नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने किसी निपुण कारीगर से कार्य सीखा है। कभी-कभी वे यूरोप में तैयार वस्तुओं की इतनी निपुणता से नकल करते हैं कि असली और नकली के बीच अंतर कर पाना मुश्किल हो जाता है। अन्य वस्तुओं में, भारतीय लोग बेहतरीन बंदूकें, और ऐसे सुंदर स्वर्णाभूषण बनाते हैं कि संदेह होता है कि कोई यूरोपीय स्वर्णकार कारीगरी के इन उत्कृष्ट नमूनों से बेहतर बना सकता है। मैं अकसर इनके चित्रों की सुंदरता, मृदुलता तथा सूक्ष्मता से आकर्षित हुआ हूँ।

उसके द्वारा अलिखित शिल्प कार्यों को सूचीबद्ध कीजिए तथा इसकी तुलना अध्याय में वर्णित शिल्प गतिविधियों से कीजिए।

मानचित्र कार्य

10. विश्व के सीमारेखा मानचित्र पर उन देशों को चिह्नित कीजिए जिनकी यात्रा इब्न बतूता ने की थी। कौन-कौन से समुद्रों को उसने पार किया होगा?

परियोजना कार्य (कोई एक)

11. अपने ऐसे किसी बड़े संबंधी (माता/पिता/दादा-दादी तथा नाना-नानी/चाचा/चाची) का साक्षात्कार कीजिए जिन्होंने आपके नगर अथवा गाँव के बाहर यात्राएँ की हों। पता कीजिए (क) वे कहाँ गए थे (ख) उन्होंने यात्रा कैसे की (ग) उन्हें कितना समय लगा (घ) उन्होंने यात्रा क्यों की (ङ) क्या उन्होंने किसी कठिनाई का सामना किया। ऐसी समानताओं और भिन्नताओं को सूचीबद्ध कीजिए जो उन्होंने अपने रहने के स्थान और यात्रा किए गए स्थानों के बीच देखीं, विशेष रूप से भाषा, पहनावा, खानपान, रीति-रिवाज, इमारतों, सड़कों तथा पुरुषों और महिलाओं की जीवन-शैली के संदर्भ में। अपने द्वारा हासिल जानकारियों पर एक रिपोर्ट तैयार कीजिए।

12. इस अध्याय में उल्लिखित यात्रियों में से एक के जीवन तथा कृतियों के विषय में और अधिक जानकारी हासिल कीजिए। उनकी यात्राओं पर एक रिपोर्ट तैयार कीजिए विशेष रूप से इस बात पर जोर देते हुए कि उन्होंने समाज का कैसा विवरण किया है तथा इनकी तुलना अध्याय में दिए गए उद्धरणों से कीजिए।

चित्र 5.14
इस चित्र में आराम करते हुए यात्रियों को दिखाया गया है

यदि आप और जानकारी चाहते हैं तो इन्हें पढ़िए:

मुज़फ्फर आलम एंड संजय सुब्रमण्यम
2006, *इंडो-पर्सियन ट्रैवेल्स इन दि एज ऑफ डिस्कवरीज़,* 1400-1800
कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज

कैथरीन अशर एंड सिंथिया टालबोट
2006, *इंडिया बिफोर यूरोप,*
कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज

फ्रांस्वा बर्नियर, *ट्रैवेल्स इन दि मुग़ल एम्पायर* 1656-1668 ई.,
लो प्राइस पब्लिकेशंस, न्यू दिल्ली

एच.ए.आर. गिब्ब (संपा.), 1993
दि ट्रैवेल्स ऑफ इब्न बतूता
मुंशीराम मनोहरलाल, दिल्ली

मुशीरुल हसन (संपा.), 2005
वेस्टवर्ड बाउंड: ट्रैवेल्स ऑफ मिर्ज़ा अबू तालिब, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यू दिल्ली

एच. के. कौल (संपा.), 1997
ट्रैवेलर्स इंडिया-एन एंथोलाजी
ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
न्यू दिल्ली

ज्यौं बैप्टिस्ट तैवर्नियर, 1993, *ट्रैवेल्स इन इंडिया,* मुंशीराम मनोहरलाल
दिल्ली

अधिक जानकारी के लिए आप निम्नलिखित वेबसाइट देख सकते हैं
www.edumaritime.org